नारायणपण्डितप्रणीत

हितोपदेश

प्रस्ताविका

डॉ० ललित कुमार मण्डल

नारायणपण्डितप्रणीत

हितोपदेश

प्रस्ताविका

डॉ० ललित कुमार मण्डल

एम०ए०, पीएच०डी०

परिमल पब्लिकेशन्स

दिल्ली

प्राक्कथन

संस्कृत-कथासाहित्य के क्षेत्र में '**पञ्चतन्त्रम्**' की भाँति '**हितोपदेशः**' ग्रन्थ का भी अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। नारायणपण्डित ने इस ग्रन्थ में पशु-पक्षियों की कथाओं के माध्यम से मनुष्यों को अपने जीवन में नैतिक एवं व्यावहारिक मूल्य ग्रहण करने का उपदेश दिया है। मैंने '**हितोपदेशः**' ग्रन्थ की 'प्रस्ताविका' [पृष्ठभूमि] की पद्यान्वय, पदशः अनुवाद, शब्दार्थ, सन्धिविच्छेद, समासविग्रह, पदपरिचय आदि व्याकरणिक टिप्पणियों के साथ '**ईलची**' नामक हिन्दी-व्याख्या लिखी है।

मेरा प्रयास कितना सार्थक और सफल हुआ – यह बात संस्कृतानुरागी छात्र-छात्राएँ तथा पाठकगण ही बताएँगे–

गच्छतः स्खलनं क्वापि भवत्येव प्रमादतः ।
हसन्ति दुर्जनास्तत्र समादधति सज्जनाः ॥

अर्थात् असावधानी के कारण चलने वाले का लड़खड़ाकर गिरना कहीं भी होता ही है [यानी वह लड़खड़ाकर कहीं-न-कहीं गिरता ही है]। वहाँ [यानी उसे देखकर] दुष्ट व्यक्ति हँसते हैं, [किन्तु] सज्जन व्यक्ति समाधान करते हैं [यानी उसे सहारा देकर उठाते हैं, सम्भालते हैं]।

कार्तिक कृष्णपक्ष अमावस्या
तिथि-३०.१०.२०१६

विद्वत्पादचञ्चरीक
डॉ० ललित कुमार मण्डल

ॐ

नारायणपण्डितप्रणीतः

हितोपदेशः

प्रस्ताविका

सिद्धिः साध्ये सतामस्तु प्रसादात्तस्य धूर्जटेः।
जाह्नवीफेनलेखेव यन्मूर्ध्नि शशिनः कला॥ १॥

भारतवर्षदेशस्य '**बिहार**'-राज्यस्य **भागलपुर**जिलान्तर्गते **पीरपैंती**-प्रखण्डस्य ओलापुर-ग्रामे निवसतोऽति निर्धन-भूमिहीन-श्रमिक कृषकस्याक्षरज्ञानविहीनस्य दिवङ्गतस्य **श्रीमुनिलालमण्डलस्य** स्वर्गस्थायाश्च **श्रीमती-ईलची-देव्याः** सूनुरहं **डॉ०-ललित-कुमार-मण्डलः प्राधीत**-नामपुत्रवान् **ख्याति**-नामपुत्रीमान् **सुषमा**–नामकलत्रवान् मातापित्रोर्गुरूणाञ्चाशीर्वादैर्नारायणपण्डितप्रणीतस्य 'हितोपदेशः' इति ग्रन्थस्य पद्यान्वय-अनुवाद-शब्दार्थ-सन्धिविच्छेद-समासविग्रह-पदपरिचय-प्रभृतिव्याकरणात्मक-टिप्पणीसहिता 'ईलची'-नामधेयां हिन्दीव्याख्यां करोमीति।

गुरुर्ब्रह्मा गुरुर्विष्णुर्गुरुर्देवो महेश्वरः।
गुरुः साक्षात्परब्रह्म तस्मै श्रीगुरवे नमः॥

अन्वयः– यन्मूर्ध्नि शशिनः कला जाह्नवीफेनलेखा इव [विराजते], तस्य धूर्जटेः प्रसादात् साध्ये सताम् सिद्धिः अस्तु॥

अनुवाद– जिस (धूर्जटि अर्थात् शिव) के मस्तक पर चन्द्रमा की कला गङ्गानदी के (शुभ्र, श्वेत) फेन की रेखा की भाँति (सुशोभित हो रही है), उस धूर्जटि [शिव] की कृपा से साध्य (पूर्ण किये जाने योग्य कार्य) के विषय में सज्जनों की सिद्धि (सफलता) हो॥१॥

पदव्याख्या– यह पद्य (श्लोक) मङ्गलाचरणात्मक है। संस्कृत-वाङ्मय में ग्रन्थ की आद्योपान्त निर्विघ्न परिसमाप्ति के लिए ग्रन्थ के

आदि, मध्य और अवसान में अथवा केवल ग्रन्थारम्भ में मङ्गलाचरण करने की परम्परा रही है। महर्षि पतञ्जलि (१५० ईसा पूर्व०) ने अपने '**व्याकरण-महाभाष्य**' में '**अष्टाध्यायी**' के प्रथम-सूत्र 'वृद्धिरादैच्' (१.१.१) के भाष्य के प्रसङ्ग में लिखा है– ''**मङ्गलादीनि शास्त्राणि प्रथन्ते वीरपुरुषाणि भवन्त्यायुष्मत्पुरुषाणि चाध्येतारश्च वृद्धियुक्ता यथा स्यु:।**'' अत एव, यहाँ भी ग्रन्थारम्भ में मृत्युञ्जय महादेव भगवान् शिव के अनुग्रह से सज्जनों की कार्यसिद्धि के विषय में मङ्गलाचरण किया गया है। **सिद्धि:**– सिद्धि (स्त्री०) १/१– सिद्धि, सफलता, पूर्णता। **साध्ये**– साध्य (नपुं०) ७/१– सिद्ध (पूर्ण) किये जाने योग्य कार्य के विषय में; √साध् + णिच् (अय्) + यत् (य)। **सतामस्तु**– सताम् + अस्तु। सताम्– सत् (पुँ०) ६/३– सज्जनों (साधुजनों) की। **अस्तु**– √अस् + लोँट् लकार १/१– हो। **प्रसादात्तस्य**– प्रसादात् + तस्य। प्रसादात्– प्रसाद (पुँ०) ५/१– प्रसाद (अनुग्रह, कृपा) से। **तस्य**– तत् (पुँ०) ६/१– उसके; यह 'धूर्जटे:' का सार्वनामिक विशेषण है। **धूर्जटे:**– धूर्जटि (पुँ०) ६/१–धूर्जटि (शिव) के। **जाह्नवीफेनलेखेव**– जाह्नवीफेनलेखा + इव। जाह्नवीफेनलेखा– जाह्नव्या: फेन:, तेषाम् लेखा (ष.त.)– जाह्नवी (गङ्गा) के फेनों की रेखा। इव– के समान, मानों; 'इव' अव्ययपद है। **यन्मूर्ध्नि**– यत् + मूर्ध्नि; यन्मूर्ध्नि– यस्य मूर्ध्नि (षष्ठी तत्पुरुष); यस्य-यत् (पुँ) ६/१– जिसके; मूर्ध्नि– मूर्धन् (पुँ०) ७/१– मूर्धा (ललाट, मस्तक, सिर) पर। **शशिन:**–शशिन् (पुँ०) ६/१– शशी (चन्द्रमा) की। **कला**– कला (स्त्री०) १/१– कला, रेखा। **विराजते**– वि + √ राज् (आ०) लँट् १/१– सुशोभित हो रही है, शोभा पा रही है। यहाँ 'चन्द्रकला' की उपमा गङ्गा के शुभ्र फेन की रेखा से दी गयी है; इसलिए यहाँ उपमा-अलङ्कार है। यहाँ 'गङ्गा' के लिए 'जाह्नवी' [जह्नु की पुत्री] शब्द प्रयुक्त है। एक पौराणिक कथा के अनुसार ९९ यज्ञों को पूर्ण करने के बाद जब राजा सगर १०० वाँ यज्ञ भी पूर्ण ही करने वाले वाला था, तब अपना सिंहासन छीन जाने के भय से यज्ञ में विघ्न डालने के उद्देश्य से इन्द्र ने यज्ञीय घोड़े को

पाताल-लोक में ले जाकर कपिल मुनि की गुफा के सामने छोड़दिया। तत्पश्चात् सगर के ६० हजार पुत्र पिता के आदेश से उन यज्ञीय घोड़ों को खोजते हुए जब कपिल मुनि की गुफा के पास सभी घोड़ों को देखकर कपिल मुनि पर घोड़ों को चुराने का आरोप लगाते हैं, तो क्रुद्ध होकर कपिल मुनि ने अपने श्राप से सगर के ६०हजार पुत्रों को जलाकर भस्म कर दिया। बहुत समय बाद सगर के वंश में उत्पन्न भगीरथ ने अपने इन्हीं पूर्वजों (सगर के ६० हजार पुत्रों) के उद्धार के उद्देश्य से गङ्गा को स्वर्ग से पाताल-लोक में लाने के लिए कठोर तपस्या की। फलस्वरूप तप से प्रसन्न गङ्गा जब स्वर्ग से उतरी, तो पहले शिव की जटाओं में रुकी, फिर जटाओं से कैलाश-पर्वत पर उतरकर अत्यन्त तीव्र गति से पृथिवी पर बहती हुई पाताल-लोक जाने वाली गङ्गा ने अपने प्रवाह से राजा जह्नु के सम्पन्न हो रहे यज्ञ को छिन्न-भिन्न कर दिया। इससे क्रुद्ध जह्नु ने गङ्गा को पी लिया। तब पुन: भगीरथ के अनुनय-विनय से जह्नु ने अपने कान से गङ्गा को बहा दिया। तब से 'गङ्गा' जाह्नवी, जह्नु-पुत्री, जह्नु-सुता, जह्नु-कन्या, जह्नु-नन्दिनी आदि नामों से पुकारी जाने लगी [द्रष्टव्य- रघु० ६/८५, ८/९५]। भगीरथ के प्रयास से पृथिवी पर आने के कारण 'गङ्गा' भागीरथी भी कही जाती है॥१॥

श्रुतो हितोपदेशोऽयं पाटवं संस्कृतोक्तिषु।
वाचां सर्वत्र वैचित्र्यं नीतिविद्यां ददाति च॥२॥

अन्वय:– श्रुत: अयम् 'हितोपदेश:' (श्रोतृभ्य:) संस्कृतोक्तिषु पाटवम्, सर्वत्र वाचाम् वैचित्र्यम् नीतिविद्याम् च ददाति॥२॥

अनुवाद– ध्यान लगाकर श्रवण किया गया अथवा सुज्ञात यह 'हितोपदेश' (श्रोताओं अथवा ज्ञाताओं को) परिष्कृत अथवा सभ्य वचनों (के बोलने) में चातुर्य, सब जगह वाणियों की विविधता (कब, कहाँ, क्या और कैसे बोला जाय–यह क्षमता) तथा नीति-विद्या (व्यवहार- कुशलता) प्रदान करता है॥२॥